कृष्ण कुमार

जन्म	:	1951 ।
जन्म-स्थान	:	टीकमगढ़, मध्य प्रदेश ।
शिक्षा	:	सागर विश्वविद्यालय, म० प्र० एवं टोरंटो विश्वविद्यालय, कनाडा ।
वृत्ति	:	दिल्ली विश्वविद्यालय के शिक्षा विभाग में प्रोफेसर ।
सम्मान	:	भारत और पाकिस्तान की स्कूली पाठ्यपुस्तकों में प्रस्तुत आजादी के संघर्ष में इतिहास का अध्ययन के लिए जवाहरलाल नेहरू फेलोशिप । गद्य लेखन के लिए शरद जोशी सम्मान ।
प्रवास	:	सन् 1975 से 1981 तक विदेश प्रवास ।
कृतियाँ	:	नीली आँखों वाले बगुले, त्रिकालदर्शन (कहानी संग्रह), अब्दुल मजीद का छुरा (यात्रावृत्त), आज नहीं पढ़ेगा (बाल-कथा संग्रह), विचार का डर, स्कूल की हिंदी (निबंध संग्रह), राज, समाज और शिक्षा; शैक्षिक ज्ञान और वर्चस्व; बच्चे की भाषा और अध्यापक; शिक्षा और ज्ञान; गुलामी की शिक्षा और राष्ट्रवाद; (शिक्षा दर्शन), महके सारी गली गली (बाल कविताओं का संकलन-संपादन निरंकार देव सेवक के साथ), वॉट इज वर्थ टीचिंग, सोशल कैरेक्टर ऑफ लर्निंग, पॉलिटिकल एजेंडा ऑफ एजुकेशन, लर्निंग फ्रॉम कन्फ्लीक्ट, प्रिजुडिस एंड प्राइड (अंग्रेजी की पुस्तकें)।
संप्रति	:	निदेशक, एन. सी. ई. आर. टी., नई दिल्ली ।

सुपरिचित लेखक और विचारक कृष्ण कुमार की केंद्रीय चिंता का विषय और संदर्भ है शिक्षा । प्राथमिक से लेकर उच्च शिक्षा तक । वे हिंदी क्षेत्र से देश के एक अग्रणी शिक्षाशास्त्री के रूप में अपनी पहचान बना चुके हैं । उनके चिंतन की विशेषता यह है कि वह आधुनिक भारतीय शिक्षा-चिंतन और उसके अनुप्रयुक्त रूपों और अवस्थाओं के गहन पर्यालोचन और समीक्षण के भीतर से उपजता है । यह पर्यालोचन और समीक्षण ऐतिहासिक अंतर्दृष्टि के साथ वृहत्तर सामाजिक-सांस्कृतिक परिप्रेक्ष्यों और संदर्भों में होता है । उनकी दृष्टि से पलभर के लिए भी शिक्षा की अनुप्रयुक्त या व्यवहृत वास्तविकता ओझल नहीं होती । उसकी वस्तुपरक यथार्थवादी पड़ताल करते हुए वे साहसपूर्वक दो-टूक बातें करते हैं । अकादमिक संस्थानों में ऐसा साहसपूर्ण स्वाधीन चिंतन प्राय: दुर्लभ है । कृष्ण कुमार ने राष्ट्रीय नवजागरण, स्वाधीनता आंदोलन, भारत विभाजन, राष्ट्रीय नवनिर्माण, भारतीय संविधान और उसके विनियोग के साथ ही हाल के दशकों में भारतीय जीवन, चिंतन एवं संस्कृति पर पड़ रहे पश्चिमी प्रभावों एवं अन्य समसामयिक मुद्दों जैसे भूमंडलीकरण, बाजारवाद, उपभोक्तावाद, सांप्रदायिकता, दलित एवं नारी विमर्श, बंधुआ मुक्ति, बाल मजदूरी आदि तमाम वैचारिक संदर्भों

में समसमयिक भारतीय शिक्षा पर सोच-विचार किया है। उनका यह कार्य अभी जारी हैं और वह आम पाठक के लिए समझ एवं विचारणा का एक जरूरी संदर्भ बनता जा रहा है।

एक ही देश और समाज में सामान्य शिक्षा के चल रहे अनेक रूपों पर भी कृष्ण कुमार का ध्यान बराबर रहा है । विनियोग-व्यवहार एवं प्रयोग के निकष पर ही किसी भी शिक्षा दर्शन की सफलता निर्भर है । प्रचलित शिक्षा पद्धतियों, विचारों, प्रविधियों आदि की परख कृष्ण कुमार इसी निकष पर करते हैं । शिक्षा के स्वरूप, प्रक्रिया और प्रविधि में वे स्थानीय जरूरतों, संसाधनों आदि पर बल देते हैं । उनके शिक्षा चिंतन में भारतीय लोकतंत्र के मूल्यों, प्रतिमानों, रूपों आदि के संदर्भ बहुत महत्त्व रखते हैं । उनके अब तक के चिंतन में भारतीय लोकतांत्रिक शिक्षा का एक आधुनिक रूप उभरता दिखलाई पड़ता है ।

यहाँ प्रस्तुत पाठ कृष्ण कुमार के पाँच व्याख्यानों के संग्रह 'शिक्षा और ज्ञान' से लिया गया है । यह व्याख्यान अप्रैल 1997 में इंस्टीट्यूट ऑफ सोशल साइंसेज, दिल्ली की ओर से आयोजित महिला पंचों के अखिल भारतीय सम्मेलन में दिया गया था । इस व्याख्यान की अंतर्वस्तु पर शीर्षक समुचित प्रकाश डालता है । शिक्षाशास्त्रियों में गाँवों और नगरों की शिक्षा विषय पर प्राय: वाद-विवाद होते रहे हैं । विमर्शपूर्ण यह व्याख्यान एक स्वस्थ और रचनात्मक दृष्टिकोण के साथ अपना पक्ष रखता है जिसमें गाँधीजी की बुनियादी शिक्षा की अवधारणा का बल है तथा शिक्षा के अपेक्षतया सर्वांगीण रूप का समाहार भी । यह पाठ रचनात्मक समझ जगाने के साथ-साथ एक विचारोत्तेजक बहस की प्रस्तावना भी करता है ।

◆ ◆ ◆

"बुनियादी शिक्षा के प्रस्ताव के साथ तीन बातें हैं, एक तो हाथ का काम स्कूल में हो, दूसरी, स्कूल की शिक्षा स्थानीय परिवेश से जुड़ी हो । और तीसरी, स्कूल में जो-जो विषय पढ़ाए जाएँ, जो-जो कौशल पढ़ाए जाएँ, ज्ञान के जो क्षेत्र वहाँ बच्चों के संपर्क में लाए जाएँ, वे अलग-अलग न होकर संगठित हों, आपस में बँधे हों ।

आधुनिक शिक्षा की एक बड़ी भारी समस्या यह रही है कि हम ऐसी विशेषताओं को जन्म देना चाहते हैं जो पहले से समाज में नहीं हैं, जिनकी केवल कल्पना हमारे मन में है । बुनियादी शिक्षा का प्रस्ताव ऐसी विशेषताओं की बात कर रहा है जो पहले से हमारे समाज में हैं । इन्हें कहीं से लाया नहीं जाना है, ये पहले से हैं, इन्हें केवल पहचानना, निखारना और सँवारना है ।"

(शिक्षा और ज्ञान)

–कृष्ण कुमार

गाँव के बच्चों की शिक्षा

जिस तरह हमारे देश में अंग्रेजों का राज था उसी तरह अफ्रीका के बहुत से हिस्सों में फ्राँस का राज था । फ्राँस द्वारा शासित ऐसे ही पश्चिमी अफ्रीका के एक छोटे से देश में, कमारा ल्ये नामक एक लेखक हुए हैं । उन्होंने अपने बचपन पर एक पूरी किताब लिखी है । इस आत्मकथा में बताया गया है कि किस तरह उन्होंने अपने गाँव में प्राथमिक शिक्षा पूरी करने के बाद शहर में अपने चाचा के पास रहकर माध्यमिक शिक्षा पूरी की । इसके बाद राजधानी में उच्चतर माध्यमिक शिक्षा पूरी की । इसके बाद उनको एक प्रतियोगिता के लिए चुना गया । इस प्रतियोगिता में देश के सबसे होशियार बच्चों को चुना जाना था और उनमें से कुछ को उच्च शिक्षा के लिए फ्राँस भेजा जाना था । जिस तरह हमारे देश में विदेश जाना बहुत बड़ी चीज मानी जाती है, उसी तरह हमारे जैसे गुलाम रहे अन्य समाजों में भी यह गौरव की बात मानी जाती है । आखिर वह दिन आया जब कमारा ल्ये को अपने रिश्तेदारों से विदा लेनी थी । उस जमाने में हवाई जहाज से विदेश जाना और भी बड़ी बात थी । कमारा को अपने माता-पिता, रिश्तेदारों, घर के तमाम लोगों से विदा लेने के लिए गाँव आना पड़ा । अपनी आत्मकथा के अंतिम अध्याय में उन्होंने इस मार्मिक दृश्य का वर्णन किया है । अपने चाचा, मामा, मौसियों और चाचियों से विदा लेने में उनको कोई खास दिक्कत पेश नहीं आई । सभी लोगों ने उन्हें अपना आशीर्वाद दिया । सभी लोग उनकी इस उपलब्धि पर गौरवान्वित महसूस कर रहे थे । इसके बाद गाँव के अन्य लोगों से भी उन्होंने विदा ली । लेकिन इस तमाम भीड़ में कहीं उनकी माँ दिखाई नहीं दे रही थी । कमारा के पास बहुत समय नहीं था । उन्हें गाँव से बहुत दूर जाना था । वे माँ को उस भीड़ में खोजने लगे और आखिर उन्हें अपनी झोपड़ी के अंदर पाया । वे रो रही थीं । कमारा ने वहाँ पहुँचकर माँ से आशीर्वाद माँगा । लेकिन माँ की सिसकियाँ रुक ही नहीं रही थीं । कमारा ने कहा कि तुम अगर अब भी नहीं बोलोगी तो मैं तुमसे विदा कैसे ले पाऊँगा । फिर जो शब्द माँ ने रोते हुए कहे, वे कमारा ल्ये ने अपनी पुस्तक के अंतिम पृष्ठ पर अंकित किए हैं । यह किताब उन लाखों अशिक्षित माँओं को समर्पित है, जो अफ्रीका के खेतों में काम करती हैं । मैं हू-ब-हू तो उन शब्दों को नहीं रख सकता, लेकिन जितना मुझे याद है, वह इस प्रकार था – "बेटा, जिस दिन तुम इस गाँव की प्राथमिक शाला में पहली बार गए थे, उसी दिन मुझे मालूम पड़ गया था कि तुम इस गाँव में नहीं टिक पाओगे । तुम्हारे पिता और तुम्हारे चाचा से मेरे यह लाख कहने पर भी, कि इस बच्चे को

मत पढ़ाओ, यह बच्चा हमारे गाँव में नहीं टिकेगा, उन्होंने मेरी बात नहीं मानी । मुझे मालूम था कि तुम इस देश में नहीं रुक पाओगे और हमारे लिए कुछ नहीं कर पाओगे । क्योंकि तुम उस प्राइमरी स्कूल में गए, इसलिए तुम हमारे बीच में नहीं रह पाओगे । लेकिन इन लोगों ने मेरी एक नहीं सुनी । आज का यह दिन मुझे इसलिए देखना पड़ रहा है क्योंकि इन लोगों ने मुझे धोखा दिया । तुम आज मुझसे विदा ले रहे हो । तुम तो बहुत पहले ही मुझसे विदा ले चुके हो । तुम्हारे मामा, चाचा, पिता सबने तुम्हें मुझसे ही नहीं बल्कि पूरे गाँव, पूरे समाज से छीन लिया है । तुम्हें जहाँ जाना है जाओ ।''

कमारा ल्ये के इन शब्दों को यहाँ बताने का प्रयोजन बहुत ही सहज है । हम लोग शिक्षा और साक्षरता की बात इस तरह करते हैं, मानो शिक्षा का कोई सामाजिक चरित्र ही न हो । जैसे वह अपने आप में कोई गुणकारी दवाई हो जिसके सेवन से समाज एकदम रोगमुक्त हो जाएगा या वह कोई एक उपहार हो जो सरकार हमें देने वाली हो या पिछले पचास साल से देती चली आ रही हो । माननीय मंत्री महोदय जाने से पहले हमें बता गए हैं कि वे भी इस बात से कुछ शर्मिंदा हैं कि शिक्षा अभी तक हर बच्चे तक नहीं पहुँची है । लेकिन इसके बावजूद वे वायदे किए जा रहे हैं । इन पचास सालों का उनके वायदा करने की कुव्वत पर कोई असर नहीं पड़ा है ।

आज शिक्षा का बहुत ही प्रतिकूल सामाजिक चरित्र उभर आया है । वह हमारे बच्चों को समाज के सबसे व्यापक सरोकारों से काटने वाला एक प्रमुख अस्त्र बन गई है । इसकी शुरुआत उसी दिन से हो जाती है जिस दिन से हमारे बच्चे प्राथमिक शाला में प्रवेश करते हैं । शिक्षा को देश में फैलाने की बात करना बेमानी है । इसलिएं मेरा अनुरोध है कि जब आप इस सम्मेलन में इस प्रसंग पर विचार करें कि कैसे प्राथमिक शिक्षा का दायरा फैले या कैसे शिक्षा केवल लड़कों तक नहीं, बल्कि लड़कियों तक भी पहुँचे या समाज के उत्पीड़ित तबकों तक पहुँचे, तो इन सब बातों पर चर्चा के साथ-साथ यह भी सोचिए कि शिक्षा की इस प्रसार-प्रक्रिया में हमारे बच्चे शिक्षा के माध्यम से क्या सीखेंगे ?

पंचायती राज का पुनरूदय एक ऐतिहासिक प्रक्रिया है । आप सब इस घटना के नेता हैं। इसमें ऐसी गुंजाइशें दिखाई देती हैं जो हमारे देश की न सिर्फ शिक्षा नीति बल्कि समाज की अन्य नीतियों और हमारे समय के समकालीन सामाजिक इतिहास को प्रभावित करने की भी क्षमता रखती हैं । लेकिन हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि यह घटना एक ऐसे वक्त में घट रही है, जब देश में बहुत कुछ ऐसा हो रहा है जो अत्यंत विनाशकारी है । पंचायती राज के इस नए अभ्युदय का राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक व सांस्कृतिक संदर्भ किसी से छिपा नहीं है । मैं आपके सामने केवल दो-चार उदाहरणों से इस संदर्भ का उल्लेख करना चाहूँगा ।

हमारे सामने एक ऐसी परिस्थिति है जिसके तहत पूँजीवाद आज देश के कोने-कोने में पहुँच रहा है । आज जिसे आर्थिक उदारीकरण यां आर्थिक सुधार कहा जाता है, वह प्रक्रिया दरअसल जमीन, जंगल, पानी, खनिजों और अन्य मानव संसाधनों को आम आदमी से छीनकर

कुछ पूँजीपति घरानों तथा विदेशी कंपनियों के हवाले कर देने की है । इस सचाई को हमारे सांसद और मंत्रिगण पिछले कई वर्षों से छिपा रहे हैं । लेकिन देश के कोने-कोने में जहाँ लोग अपनी जमीनों से उखाड़े जा रहे हैं और अपने बच्चों से दूर जाकर रोजी-रोटी कमाने के लिए विवश हो गए हैं, वहाँ इस परिस्थिति में रहने वाले हर व्यक्ति को पता है कि देश किस दौर से गुजर रहा है और इस बात का भी संकेत उन्हें मिल चुका है कि इसका क्या भविष्य है ।

हम देखते हैं कि जगह-जगह स्थानीय प्रतिरोध की लड़ाइयाँ चल रही हैं । इन लड़ाइयों में नीचे से ऊपर तक न्याय माँगने की प्रक्रिया सक्रिय है । न्यायालयों के दरवाजे खटखटाए जा रहे हैं । कहीं चैन नहीं है । सारे देश में खलबली-सी मची हुई है, लेकिन इस खलबली का कोई प्रतिबिंब हमारी संसद में दिखाई नहीं देता । वहाँ आज भी लोग हँस रहे हैं, एक सरकार को बदलकर दूसरी सरकार ला रहे हैं । मतदाताओं को बंधुआ मजदूरों की तरह बार-बार मत देने के लिए विवश कर रहे हैं । यह राजनीति की मुख्यधारा है । इस परिस्थिति में लगता है कि देश अपनी सार्वभौमिक स्वतंत्रता खो बैठेगा ।

राजनीति के मंच पर नजर दौड़ाएँ । आप सभी चुनकर आए हुए लोग हैं । आपको पता है कि किस तरह हिंसा और अपराध राजनीति का हिस्सा बन चुके हैं । पंचायती राज के चुनावों में भी जगह-जगह, विशेषकर, महिलाओं और अन्य उत्पीड़ित वर्गों के सदस्यों को हिंसा का शिकार होना पड़ा है । जैसे-जैसे हम राजनीति की इस कड़ी में आगे बढ़ते हैं, हिंसा का चरित्र उतना ही सघन दिखाई पड़ता है । इन नेताओं के सामने इस समाज की शिक्षा, स्वास्थ्य तथा नई नीतियों की बात करना एकदम बेमानी है https://www.evidyarthi.in/

यह सामाजिक हिंसा सिर्फ राजनीति में ही नहीं, बल्कि सामाजिक संबंधों में भी फैल रही है । इस सामाजिक हिंसा का महिलाएँ सीधे शिकार बनती हैं । साथ में हमारे समाज के तमाम कामगार, आदिवासी, छोटे किसान और मजदूर जगह-जगह इस हिंसा को सह रहे हैं जो पूँजी के शासन और एकदम भ्रष्ट एवं अप्रासंगिक हो गई राजनीति के साथ-साथ राजनीति की मुख्यधारा में भी शामिल हो गई है । इस परिस्थिति में पंचायती राज का उदय हुआ है । यह एक बहुत बड़ा अंतर्विरोध है, परंतु इसमें जहाँ एक तरफ चिंगारी और रोशनी झाँकती है, वहीं ढेरों आशंकाओं का अँधेरा भी दिखाई देता है । प्रश्न उठता है कि यह पंचायती राज चलने भी दिया जाएगा या नहीं। हमें यह मालूम है कि अभी तक हर प्रदेश में पंचायतों के चुनाव नहीं हो सके हैं । हमें मालूम है कि ऐसे महत्त्वपूर्ण अधिकार, जिनमें देश की सबसे शोषित जनता का सुधार छिपा हुआ है, पंचायतों को नहीं दिए गए हैं । मसलन खनिजों के इस्तेमाल को लेकर ग्रामसभाएँ केवल चर्चा कर सकती हैं । किसी कंपनी को इन खनिजों को न सौंपा जाए, इस बारे में निर्णय लेने का अधिकार उन्हें नहीं है । यही स्थिति जल, जंगल और जमीन के बुनियादी अधिकार को लेकर भी है । कुछ प्रदेशों में पंचायतों को मामूली-से मुद्दों पर चंद अधिकार सौंपे गए हैं । ये अधिकार भी महत्त्वपूर्ण हैं। हम मानते हैं कि हमें इनका इस्तेमाल करना है, लेकिन सचाई यह है कि स्थानीय स्तर पर

जितनी बड़ी खलबली हमारे देश में मची है, उसे किसी भी प्रकार से नियंत्रित करने की स्थिति में आज हमारी पंचायतें नहीं हैं यद्यपि आलंकारिक रूप से पंचायतों को भारतीय लोकतंत्र की सबसे बड़ी उपलब्धि बताया जा रहा है ।

इस समूचे परिदृश्य में प्राथमिक शिक्षा को अधिक कारगर बनाने की जरूरत एक बहुत बड़ा सवाल है । प्राथमिक शिक्षा कोई अजूबा या दूर की कौड़ी नहीं है, बल्कि उसी संदर्भ में जन्म लेती है जो हमारे इर्द-गिर्द रचा जा रहा है । आज जब आप प्राथमिक शिक्षा में हस्तक्षेप कर शिक्षा की मौजूदा व्यवस्था पर सामुदायिक दबाव बढ़ाकर उसे अधिक कारगर बनाने की बात करते हैं तो प्रश्न उठता है कि हमारे सामने इस हस्तक्षेप के लिए आज कौन-से मुद्दे सबसे प्रमुख होने चाहिए। मेरी राय में दो ऐसे क्षेत्र हैं जिनमें हमें इन मुद्दों को ढूँढ़ना होगा ।

इनमें से एक है शिक्षा पर नौकरशाही के प्रभुत्व को कम करने का मुद्दा । अगर हमारे देश में बड़े-बड़े कमीशनों और कमिटियों द्वारा सुझाए गए शैक्षिक सुधार एक के बाद एक असफल रहे तो उसके पीछे एक बहुत बड़ा कारण हमारी शिक्षा पर हावी अफसरशाही है जिसका अनुभव आपको पंचायतों में काम करते हुए हो गया होगा । तालीम से मुखातिब होने पर पाया जाता है कि नौकरशाही का शिकंजा अच्छे-से-अच्छे सुझावों और संभावनाओं को कुचल देता है, क्योंकि कोई अफसर नहीं चाहता कि उसकी ताकत कम हो । नौकरशाही के खिलाफ इस संबंध में प्राथमिक स्कूल का अध्यापक आपका साथी है, शत्रु नहीं । पिछली कई पीढ़ियों से शिक्षा की विफलताओं का दोष प्राथमिक शाला के शिक्षकों पर मढ़ा जा रहा है । आप भी उन्हें दोष देने की आदी हो जाएँगी । यह एक बड़ा प्रश्न है कि आप इन्हें अपना शत्रु मानेंगी या साथी समझकर सामाजिक संघर्ष की प्रक्रिया में शामिल करेंगी जिसमें हर स्तर पर जागरूकता की जरूरत है ? देश में घुटने टेक देने की स्थिति पैदा हो रही है जिसमें अगर हम अपने सहयोगियों से लड़ते रहेंगे तो हमारी परिस्थिति वैसी ही होगी जैसी पिछले पाँच दशकों से है, जिसमें अच्छे-से-अच्छा शैक्षिक सुधार भी कुछ महीनों तक चल कर समाप्त हो जाता है ।

देश में आज प्राथमिक शिक्षा के क्षेत्र में काफी विदेशी धन आया हुआ है । इस विदेशी धन को खर्च करने में, हमारे विधायक, मंत्री और अफसर दिन-रात व्यस्त हैं । क्या आपको मालूम है कि वे व्यस्त क्यों हैं ? यह धन किस तरह खर्च होता है ? एक कमेटी ने पता लगाया था कि प्रत्येक एक रुपया जो समाज पर खर्च करने के लिए सरकार से आता है, उसका तीस पैसे से भी कम लोगों तक पहुँचता है । प्राथमिक शिक्षा के लिए विदेशी धन क्यों आया है ? इस धन के पीछे आर्थिक उदारीकरण से जुड़ी हमारे देश की विवशताएँ और हमारे राजनीतिज्ञों द्वारा विश्व बैंक के सामने घुटने टेकने की समूची घटना शरीक है, जिस पर कभी हमारी संसद ने ईमानदारी से चर्चा नहीं की । हममें से बहुत लोग इसे आलोचना का विषय नहीं बनाते क्योंकि हम सोचते हैं कि शायद शिक्षा का इससे कोई संबंध नहीं है, बल्कि सिर्फ इस बात से है कि जब पैसा आ ही गया है तो उसे खर्च कैसे किया जाए । स्पष्ट है कि यह पैसा बड़े पैमाने पर भ्रष्टाचार को जन्म

दे रहा है । जहाँ भ्रष्टाचार होगा, वहाँ हिंसा होगी और जहाँ हिंसा होगी वह महिलाओं पर ही अधिक होगी, हमें यह मान कर चलना होगा । इसलिए हरेक गाँव में इस सवाल को विचार का विषय बनाना पड़ेगा कि क्या हम अपने बच्चों का लालन-पालन, उनकी शिक्षा, अपने साधनों से नहीं कर सकते ? अगर आज यह स्थिति है कि हमको कुछ विदेशी संस्थाओं ने धन दिया है तो हमारे पास यह तय करने का अधिकार होना चाहिए कि यह धन किस तरह खर्च होगा ।

आज इस धन का सबसे बड़ा हिस्सा शिक्षा के सबसे गैर-जरूरी कामों पर खर्च हो रहा है । बड़े-बड़े लोगों का आना-जाना, बड़ी-बड़ी गोष्ठियों में भाग लेना, बड़ी तादाद में लोगों का अपनी सलाह के लिए पैसे लेना, जिसको आज कंसलटेंसी फीस कहा जाता है, इसी सब में ज्यादातर पैसा खर्च हो जाता है, और गिना-चुना पैसा ही हमारी उन धूल-धूसरित प्राथमिक शालाओं में पहुँचता है जहाँ, कहा जाता है, देश का भविष्य पल रहा है ।

इस पहलू पर पंचायतें तभी प्रश्न उठा पाएँगी जब वे अपने आप को तैयार करेंगी । जो प्रश्न कल तक सरल दिखता था, वह आज बहुत जटिल हो चुका है । प्राथमिक शाला का शिक्षक इस प्रक्रिया का उतना ही मारा हुआ है, जितना उत्पीड़ित वर्ग का वह बालक या बालिका जिसको स्कूल में दाखिला होते ही निकालने की तैयारियाँ शुरू हो जाती हैं । असफलता के वे ढाँचे हमारी प्राथमिक शिक्षा में पहले से ही विद्यमान हैं, जिनके रहते कोई बच्चा कक्षा एक, दो, तीन से गुजरते हुए, बगैर अपमानित हुए, आगे नहीं बढ़ सकता । आपको मालूम है कि दो-तिहाई छात्र आठवीं तक पहुँचने के पहले ही शाला छोड़ देते हैं । देश के बहुत बड़े इलाके में इन बच्चों का अनुभव प्राथमिक शाला के शिक्षकों के अनुभव से भिन्न नहीं है, यद्यपि शाला की परिस्थिति में शिक्षक ही बच्चे पर अत्याचार करता हुआ दिखाई देता है । सचाई यह है कि शिक्षक स्वयं उपेक्षा और तिरस्कार का मारा है । उसकी ट्रेनिंग और तैयारी उतनी ही लचर है जितनी उसकी हैसियत । मगर वह अपनी लड़ाई लड़ने की जगह बच्चे पर गुस्सा उतारता है ।

मुझे लगता है कि प्राथमिक शाला के शिक्षक के साथ चलकर शिक्षा की समस्याओं तथा उसकी लाचारी को समझना पंचायत प्रतिनिधियों के लिए बहुत जरूरी है । जिस तरह शिक्षा के कर्म का देश में अवमूल्यन हो रहा है, वह किसी से छिपा नहीं है । कुछ प्रदेशों में आज खुलेआम शिक्षकों को 500 रुपए महीने का वेतन देकर नियुक्त किया जा रहा है । यह वेतन अब 1200 रुपए किए जाने की संभावना है । (यह राशि हाल में कुछ और बढ़ा दी गई है) । आप सोच सकते हैं कि ऐसी स्थिति में पढ़ाना कितना आदरणीय बन सकेगा और किन परिस्थितियों में शिक्षक उन नौकरशाहों से जूझ सकेंगे जो हजारों रुपए पाकर केवल हुक्म चलाते हैं । यह एक पुरानी गुत्थी है । अगर इसको सुलझाना है तो प्राथमिक शाला के शिक्षक पर दोषारोपण करने की जगह उसके साथ मिलकर, उसकी मजबूरी और लाचारी को समझने का सिलसिला शुरू करना होगा । प्राथमिक शालाओं में महिला शिक्षकों के ऊपर भी कोताही और लाचारी के दोष अक्सर लगाए जाते हैं । आप उनकी स्थिति को कभी उनके दृष्टिकोण से देखेंगी तो एक ऐसा रास्ता खुलेगा जिसमें शिक्षक

स्वयं संगठित होकर आपके साथ आएँगे ।

शिक्षा को ताकतवर वर्गों की विचारधारा के प्रचार के रूप में इस्तेमाल करने की एक दूसरी परिधि है । इसके भीतर शिक्षा का सामाजिक चरित्र निर्धारित होता है । आज जिस शिक्षा को फैलाने की बात की जा रही है उसके पाठ्यक्रम को पढ़ाने के लिए इस्तेमाल की जाने वाली पाठ्यपुस्तकों पर गौर करें तो आप पाएँगी कि पाठ्यक्रम में कहीं भी ग्रामीण समाज की छवि नहीं है । यह पाठ्यक्रम पूरी तरह से समाज के शासक वर्गों के जीवन को प्रस्तुत करता है । इस शिक्षा के जरिए उन्हीं की जीवन-शैली, विचार, सपने और अरमान हमारे बच्चों तक पहुँचाए जाते हैं और इसीलिए ऐसी परिस्थिति पैदा होती है कि कोई होशियार बच्चा गाँव में नहीं टिक सकता । कमारा ल्ये की तरह उसको भी गाँव छोड़कर शहर, और शहर छोड़कर राजधानी, तथा राजधानी छोड़कर विदेश जाना पड़ता है । इस पाठ्यक्रम की छवि की विसंगतियों को गहराई से समझने पर आप पाएँगी कि विकास की जो प्रक्रिया चालीस-पचास वर्षों में, खास तौर पर, पिछले तीस वर्षों से चली है, उसका सबसे महत्त्वपूर्ण अंतर्विरोध शिक्षा में ही केंद्रित है ।

संभव है इस सभा में कहीं टिमरनी से आई साधना बहन बैठी हों, जिन्होंने कुछ समय पहले एक लेख लिख कर हरित क्रांति द्वारा प्रोत्साहित सोयाबीन की खेती के दुष्प्रभावों पर टिप्पणी की थी । उनके अनुसार हरित क्रांति के नाम पर जो प्रक्रिया 60 के दशक में शुरू हुई थी, उसके चलते एक तरफ गाँव में गरीबी और विषमता बढ़ी है तो दूसरी तरफ अमीर लोग पहले से अधिक अमीर हुए हैं । इस हरित क्रांति की वजह से हमारे गाँव की जमीनें बर्बाद हुई हैं । नई-नई फसलें, जिनका हमारे देश की आबोहवा से कोई संबंध नहीं था, नकदी फसलों का प्रलोभन बताकर बोई गई । उन फसलों की बदौलत, जिनमें सोयाबीन प्रमुख है, देश की मिट्टी कई जगहों पर एकदम अनुर्वर होने के करीब पहुँच गई है । रासायनिक खाद और कीटनाशकों के प्रयोग से पानी और मिट्टी के विषैले होने का खतरा है । यदि हम पर्यावरण, प्रकृति संरक्षण और समाज में समता के मूल्यों को स्थापित करने की बात नहीं करेंगे तो शिक्षा इस विनाश को और भी तेजी से फैलाएगी। एक शिक्षक के नाते ऐसा कहते हुए आपके सामने मुझे कष्ट तो बहुत होता है पर संकोच नहीं, क्योंकि आप ही शायद अब भारत में निर्णय प्रक्रिया की वह तह हैं जहाँ पर कोई नई बात कही जा सकती है । वरना ऊपर के स्तरों पर तो मंत्रियों की चाटुकारिता और विभागीय अफसरों के तलवे चाटने की प्रक्रिया में ही शिक्षा दर्शन खत्म हो जाता है । आज इस बात को आप ही नए सिरे और निचले स्तर से शुरू कर सकती हैं ।

क्या वजह है कि इतने बड़े पैमाने पर आजादी के बाद गाँवों से विस्थापन हुआ जिसकी सीधी-सीधी मार बचपन पर पड़ी ? क्या वजह है कि इस विकास प्रक्रिया का सबसे कम लाभ ग्रामीण जनता को मिला जो आज भी बार-बार, बजट में सब्सिडी की माँग करती है और इस सब्सिडी की बैसाखियों के सहारे ही जीती है ? क्या वजह है कि पचास वर्षों के बाद भी आजादी के आंदोलन के दौरान उठा ग्राम स्वराज़ का नारा एक प्रवंचना बन कर रह गया है ?

गाँधीजी की बुनियादी तालीम की रूपरेखा आज भी शिक्षा, खासतौर से, प्राथमिक शिक्षा को एक नया जीवन देने में सक्षम है । इसमें संदेह नहीं कि हमें नए सिरे से उसकी मीमांसा करनी पड़ेगी, लेकिन गाँधीजी के ग्राम स्वराज के सपने का अर्थ है गाँवों को स्वायत्तता देना तथा ग्रामीणों को सम्मानपूर्वक जीने का हौसला देना । इस प्रक्रिया में बुनियादी तालीम की उनकी रूपरेखा आज भी हमें प्रेरणा और काम करने की एक परिधि दे सकती है । आखिर उन्होंने इतना ही तो कहा था कि गाँव के पारंपरिक उद्योगों और गाँव की प्रकृति से शिक्षा को जोड़े बगैर शिक्षा में सीखने का वह तत्त्व नहीं आ सकता जो उसे सार्थक बनाता हो । शिक्षा का जो चरित्र पिछले पचास वर्षों में उभरा है, वह दरअसल गुलामी के दिनों से ही स्थापित हो गया था । हमारे नेताओं ने इसको बदलने की कोई खास कोशिश नहीं की । उसके सामाजिक चरित्र पर सीधे प्रहार किए बिना शिक्षा और विनाशकारी विकास के बंधन को आप तोड़ नहीं सकतीं । इस बंधन को तोड़ना ही शायद आज इस नई शक्ति का पहला मुद्दा है, जिसको आप पंचायती राज और पंचायती राज के दायरे में महिला शक्ति का नाम दे रही हैं ।

कमारा ल्ये की कहानी हर गाँव में घटती है और हम उसे लाचारी से देखते हैं । हमने देश के विकास को जिस तरह से समझा है और अमल में लाते हुए देखा है, उससे यह लाचारी बढ़ती ही जा रही है । आज तो बड़े राजनीतिक दलों के नेता भी यह कहते हैं कि पूँजी के राज के सामने हम लाचार हैं, ऐसा लगता है कि सारा देश बहुराष्ट्रीय कंपनियों को गिरवी रख दिया गया है । भारत का पूँजीवाद विश्व पूँजीवाद का साथी बनकर हमारे प्राकृतिक साधनों को सिर्फ दोहन का शिकार बनते हुए देखना चाहता है । वह हमारे मानव संसाधनों का केवल इस काम के लिए इस्तेमाल करना चाहता है कि वे इस दोहन के काम आएँ । आज देश के कुछ हिस्सों में यह कथा ज्यादा आसानी से पढ़ी जा सकती है तो कुछ हिस्सों में कल पढ़ी जाएगी । इस इबारत को आज अगर हम नहीं पहचानेंगे तो क़ल काफी देर हो जाएगी ।

गाँव के बच्चे को अपने ध्यान के केंद्र में रखकर देखें तो हम आसानी से समझ लेंगे कि आज की शिक्षा ग्रामीण समाज की पुनर्रचना करने में इतनी असमर्थ क्यों है । मैं सालाना शैक्षिक सत्र के ढाँचे में निहित असुविधा की बात नहीं कर रहा हूँ क्योंकि वह पुरानी और जानी-पहचानी बात है । शिक्षा सत्र का ढाँचा कब ऐसा बनेगा कि बच्चा घर की जिम्मेदारियों को निभाते हुए पढ़ाई कर सके ? कौन कह सकता है ? निर्णय लेने वालों को यह समस्या सौ साल से ज्ञात है, और वे समय-समय पर इसकी चर्चा भी करते हैं, पर परनाला वहीं गिरता जा रहा है । शायद वह तब तक वहीं गिरता रहेगा जब तक ग्रामीण समाज और उसके राजनैतिक नेता जबर्दस्त दबाव नहीं पैदा करते । फिलहाल मैं सत्र के ढाँचे, स्कूलों की खस्ता हालत, शिक्षक की दयनीय परिस्थिति जैसे संरचनात्मक मुद्दों की जगह पाठ्यक्रम के गाँव विरोधी चरित्र का मुद्दा उठा रहा हूँ । आज पढ़ाई जा रही पाठ्यपुस्तकों में गाँव की उपस्थिति नगण्य है । भाषा की पढ़ाई के लिए लगाई गई पाठ्यपुस्तक के बीस-पच्चीस पाठों में मुश्किल से दो-तीन पाठ ऐसे होते हैं जिनका कथ्य ग्रामीण

जीवन से संबंधित होता है । यह हालत दिखाती है कि देश की पचहत्तर फीसदी जनता का परिवेश पाठ्यपुस्तक बनाने वालों के लिए क्या महत्त्व रखता है । लेकिन ज्यादा चिंता तब होती है जब आप उन दो-तीन पाठों को ध्यान से पढ़ते हैं जिनमें ग्रामीण परिवेश या पात्रों का चित्रण किया जाता है । अधिकांश रूप से यह चित्रण गाँव के जीवन को दोयम दर्जे का सिद्ध करता है । गाँव में रहने वाले स्त्री-पुरुष प्रायः अनपढ़, अंधविश्वासी और मूर्ख दिखाए जाते हैं । जब कभी गाँव का सकारात्मक रूप उभारा जाता है, वह एक रोमांटिक अंदाज में होता है । वास्तव में जिए जा रहे जीवन की समग्रता उसमें नहीं होती । कोई आश्चर्य नहीं कि पढ़-लिखकर बड़ा होने वाला गाँव का बच्चा अपने परिवेश की जिंदगी से मानसिक रूप से कट जाता है या फिर भीतर-ही-भीतर उससे नफरत करने लगता है ।

ऐसी स्थिति में लोकतांत्रिक प्रक्रियाएँ पूँजी के लिए नई-नई बाधाएँ खड़ी करती हैं । इसीलिए यह खतरा हम सबके सामने है कि पंचायती राज-व्यवस्था के अंतर्गत स्थानीय शासन या स्थानीय स्वायत्तता का जो नारा बुलंद किया गया है, वह क्या सिर्फ नारा सिद्ध होगा और जगह-जगह हो रही जमीन, जंगल, पानी, शिक्षा और स्वास्थ्य की स्वायत्तता की लड़ाइयों के उभरने पर यह व्यवस्था बंद या ध्वस्त कर दी जाएगी । प्राथमिक शिक्षा के ध्येय को लेकर इस आशंका से निराश हुए बगैर अपने कर्त्तव्यों की ओर आगे बढ़ना और उनको एक संघर्ष की भूमिका में रखकर देखना ही हम सब में वह मनोबल जुटा पाएगा जिसे आज की भ्रष्ट राजनीति तोड़ चुकी है ।

हमारे बच्चे हमारे इर्द-गिर्द ही रहते हैं, वे जानते हैं कि हममें से बहुतों का मनोबल, आज इस स्थिति से लड़ने का नहीं रह गया है । क्या वजह है कि आज हमारे कई गाँवों में पानी उपलब्ध नहीं है, लेकिन शराब उपलब्ध है । पेप्सी और कोकाकोला के बोर्ड हर जगह पहुँच गए हैं, लेकिन साफ-सुथरा पानी पीने के लिए हमें इस शहर में भी फिल्टर लगाना पड़ता है । इस पूरी परिस्थिति की विसंगतियों को आप एक बार उधेड़ना शुरू करें तो आप पाएँगी कि यह पूरा जाल जो नीतियों के नाम पर हमारे सामने रखा जाता है, एक फटे हुए पुराने शॉल जैसा है । इसको उधेड़े बगैर नए सिरे से इसकी बुनाई नहीं हो सकती । इसकी नए सिरे से बुनावट में ही कहीं शिक्षा का सुधार और उसकी प्रक्रिया को फिर से बल देने का इरादा शामिल है ।

◆ ◆ ◆

अभ्यास

पाठ के साथ

1. कमारा ल्ये का देश किस देश का उपनिवेश था ? अपनी आत्मकथा के अंतिम अध्याय में उन्होंने किस प्रसंग का चित्रण किया है ? संक्षेप में लिखें ।

2. कमारा ल्ये की आत्मकथा किसे समर्पित है ?
3. कमारा ल्ये की माँ उन्हें क्यों नहीं पढ़ाना चाहती थी ?
4. 'शिक्षा अपने आप में कोई गुणकारी दवाई नहीं है जिसके सेवन से समाज एकदम रोगमुक्त हो जाएगा या वह कोई एक उपहार हो जो सरकार हमें देने वाली हो या पिछले पचास साल से देती चली आ रही हो ।' आखिरकार शिक्षा क्या है ? लेखक के इस कथन का अभिप्राय क्या है ? स्पष्ट करें ।
5. लेखक के अनुसार शिक्षा बच्चों को समाज के सबसे व्यापक सरोकारों से काटने वाला एक प्रमुख अस्त्र बन गई है । लेखक ने ऐसा क्यों कहा है ? क्या आप इससे सहमत हैं ? आप अपना विचार दें ।
6. आर्थिक उदारीकरण से आप क्या समझते हैं ? इसके क्या दुष्परिणाम हुए हैं ?
7. लेखक ने प्रस्तुत पाठ में देश की वर्तमान राजनीतिक व्यवस्था पर आक्षेप किए हैं । उनके विचार से देश की राजनीतिक व्यवस्था में कौन-सी समस्याएँ प्रवेश कर चुकी हैं ?
8. 'पंचायती राज में एक तरफ चिंगारी और रोशनी झाँकती है, वहीं ढेरों आशंकाओं का अँधेरा भी दिखाई देता है ।' यहाँ किन रोशनी और आशंकाओं की ओर संकेत है ?
9. प्राथमिक शिक्षा को अधिक कारगर बनाने के लिए लेखक ने कौन-से दो क्षेत्र सुझाए हैं ?
10. नौकरशाही ने प्राथमकि शिक्षा को किस प्रकार नुकसान पहुँचाया है ?
11. प्राथमिक शिक्षा की असफलता का दोष किन्हें दिया जाता है ?.
12. प्राथमिक शिक्षा के क्षेत्र में विदेशी धन के आगमन की अंतिम परिणति महिलाओं पर हिंसा के रूप में होनी है । कैसे ?https://www.evidyarthi.in/
13. लेखक के प्राथमिक शाला के शिक्षकों से संबंधित विचार संक्षेप में लिखें ।
14. साधना बहन के हरित क्रांति के संबंध में क्या विचार हैं ?
15. 'यदि हम पर्यावरण, प्रकृति, संरक्षण और समाज में समता के मूल्यों को स्थापित करने की बात नहीं करेंगे तो शिक्षा इस विनाश को और भी तेजी से फैलाएगी ।' लेखक के इस कथन का अभिप्राय स्पष्ट करें । आखिरकार शिक्षा इस विनाश को कैसे तेजी से फैलाएगी ।
16. गाँधीजी की बुनियादी शिक्षा की रूपरेखा क्या थी ?

पाठ के आस-पास

1. पंचायती राज क्या है ? इस विषय पर 300 शब्दों में एक निबंध लिखें ।
2. आर्थिक उदारीकरण ने वर्तमान समय में कई पर्यावरणीय संकट पैदा किए हैं । 'आर्थिक उदारीकरण और पर्यावरण की समस्याएँ' इस विषय पर एक आलेख तैयार करें और इसका पाठ छात्र-गोष्ठी में करें ।
3. स्वतंत्रता संग्राम के समय गाँधीजी ने भारतीयों की शिक्षा के लिए 'बुनियादी शिक्षा' की रूपरेखा प्रस्तुत की थी । बुनियादी शिक्षा का सीधा संबंध हस्त-कौशल एवं रोजगार से था । 'बुनियादी शिक्षा' के संबंध में अपने शिक्षक से विशेष जानकारी प्राप्त करें ।
4. प्रस्तुत पाठ कृष्ण कुमार के भाषण का लिखित रूप है । यह भाषण उन्होंने महिला पंचों के समक्ष दिया था । कहा जाता है कि एक पुरुष के शिक्षित होने से एक व्यक्ति शिक्षित होता है और एक महिला के शिक्षित होने से पूरा परिवार । बिहार में पंचायती राज-व्यवस्था में महिलाओं को 50 फीसदी आरक्षण प्राप्त है । पंचायती-राज व्यवस्था में महिलाओं का आरक्षण प्राथमिक शिक्षा के सुधार में किस तरह

सहायक हो सकता है, इस विषय पर एक निबंध लिखें ।

5. लेखक के अनुसार यदि हम पाठ्यपुस्तकों पर गौर करें तो पाएँगे कि ये पूरी तरह से शासक वर्गों के जीवन को प्रस्तुत करती हैं । आप अपनी हिंदी की पाठ्यपुस्तक का भी क्या ऐसा ही स्वरूप पाते हैं ?

6. कृष्ण कुमार देश के एक प्रमुख विचारक, लेखक और शिक्षाविद् हैं । उनकी पुस्तकों का उल्लेख लेखक परिचय में भी किया गया है । उनके व्यक्तित्व एवं कृतित्व के संबंध में अपने शिक्षक से विशेष जानकारी प्राप्त करें ।

भाषा की बात

1. निम्नलिखित शब्दों के विपरीतार्थक शब्द लिखें –
   प्रतिकूल, सहज, प्राथमिक, सुलझाना, ग्रामीण, प्रश्न, जमीन, स्वायत्तता, विदेशी
2. निम्नलिखित शब्दों के वचन परिवर्तित करें –
   माँ, सिसकी, रिश्तेदार, लड़का, लड़की, किसान, मजदूर, विधायक, मंत्री, अफसर, विवशता, पुस्तक, प्रक्रिया
3. निम्नलिखित शब्दों के समानार्थी लिखें –
   प्राथमिक शाला, अनपढ़, बुनियादी, गुंजाइश, महिला शिक्षक, गिरवी, इस्तेमाल, ताकतवर, आजादी, हैसियत, लचर, दाखिला, अरमान
4. निम्नलिखित शब्दों का वाक्य प्रयोग द्वारा लिंग निर्णय करें –
   गाँव, सुविधा, भाषा, पढ़ाई, शॉल, सुधार, जाल, नीति, परिदृश्य.
5. अर्थ की दृष्टि से नीचे दिए गए वाक्यों की प्रकृति बताएँ –
   (क) प्राथमिक शिक्षा के लिए विदेशी धन क्यों आया है ?
   (ख) आज शिक्षा का बहुत ही प्रतिकूल सामाजिक चरित्र उभर आया है ।
   (ग) मुझे मालूम था कि तुम इस देश में नहीं रुक पाओगे और हमारे लिए कुछ नहीं कर पाओगे ।
   (घ) तुम्हें जहाँ जाना है जाओ ।
   (ङ) संभव है इस सभा में कहीं टिमरनी से आई साधना बहन बैठी हैं ।
   (च) क्या वजह है कि आज हमारे कई गाँवों में पानी उपलब्ध नहीं है, लेकिन शराब उपलब्ध है ।

शब्द निधि

होशियार : चतुर, मेधावी
कुव्वत : क्षमता
प्रतिकूल : विपरीत
सरोकार : लगाव, संबंध
बेमानी : व्यर्थ, बेकार
दायरा : क्षेत्र
उत्पीड़ित : शोषित, जिसका उत्पीड़न हुआ हो
तबका : वर्ग
पुनरूदय : पुनः उदय

गुंजाइश : संभावना

अभ्युदय : उत्थान

खलबली : बेचैनी

कामगार : काम करनेवाले

अप्रासंगिक : अनुपयुक्त

आलंकारिक रूप से : सजावटी तौर पर

कारगर : सफल, उपयोगी

नौकरशाही : अफसरशाही

तालीम : शिक्षा

मुखातिब : आमने-सामने

शिकंजा : घेरा

विवशता : मजबूरी, कुछ न कर पाने की स्थिति

शरीक : शामिल

तादाद : संख्या

कंसलटेंसी फीस : सलाह देने के लिए लिया गया शुल्क

तिरस्कार : अपमान, उपेक्षा

परिधि : घेरा, वृत्त

अंतर्विरोध : भीतरी विषमता

सब्सिडी : छूट

प्रवंचना : ठगी

परनाला : नाला

स्वायत्त : आत्मनिर्भर

समग्र : संपूर्ण

दोयम दर्जा : दूसरा स्तर